संपादक
संजय सहाय
विशेष सहयोग
इब्बार रब्बी
प्रबंध निदेशक
रचना यादव
कार्यालय व्यवस्थापक
वीना उनियाल
प्रसार एवं लेखा प्रबंधक
हरिस महमूद
शब्द-संयोजन
सुभाष कश्यप
कार्यालय सहायक
किशन कुमार, दुर्गा प्रसाद
मुख्य विज्ञापन प्रतिनिधि (उ.प्र.)
राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
रेखाचित्र
सैली बलजीत, रोहित प्रसाद
अनुभूति गुप्ता

कार्यालय
अक्षर प्रकाशन प्रा. लि.
2/36, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2
संजय सहाय : 8800229316
दूरभाष : 011-41050047, 23270377
ईमेल : editorhans@gmail.com
वेबसाइट : www.hanshindimagazine.in

मूल्य : 40 रुपए, वार्षिक : 400 रुपए
संस्था और पुस्तकालय : 600 रुपए
आजीवन : 10,000 रुपए
विदेशों में : 70 डॉलर
सारे भुगतान मनीऑर्डर/चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. (Akshar Prakashan Pvt. Ltd.) के नाम से किए जाएं.

हंस/अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे. अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है. हंस में प्रकाशित रचनाओं में विचार लेखकों के अपने हैं उनसे हंस की सहमति अनिवार्य नहीं है. साथ ही उनके मौलिक या अप्रकाशित होने का उत्तरदायित्व भी संपादक और प्रकाशक का नहीं है.

प्रकाशक-मुद्रक : **रचना यादव खन्ना** द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि., 2/36, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा एम.पी. प्रिंटर्स (प्रो. भास्कर इंडस्ट्रीज लि.) बी-220, फेज-II नोएडा (उ.प्र.) से मुद्रित. संपादक–संजय सहाय

'केंद्रीय हिंदी संस्थान', आगरा से सहयोग प्राप्त

जून, 2020

मूल संस्थापक : प्रेमचंद : 1930
पुनर्संस्थापक : राजेन्द्र यादव : 1986

पूर्णांक-404 वर्ष:34 अंक:11 जून 2020

आवरण : बंशीलाल परमार

जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

इस अंक में

अपनी बात
4. कुहासा छंटने तक... : रचना यादव

अपना मोर्चा
6. पत्र

मुड़-मुड़ के देख
10. सूर्यपूजा : भुवनेश्वर

न हन्यते
12. पाऊं कहां हरि हाय तुम्हैं : राकेश रंजन
40. तत्त्वाभिनिवेशी आलोचक नंदकिशोर नवल : योगेश प्रताप शेखर
15. वह एक ऐसी सतह पर था जिसके ऊपर उठना ही नहीं चाहता था : प्रभात रंजन

कहानियां
18. मृत्यु : ज्ञानरंजन
22. काहे होत अधीर : उषा किरण खान
32. बुखार : प्रियदर्शन
44. होरी खेलूंगी कह कर बिस्मिल्लाह : अनिल चौधरी
60. राष्ट्रपति का दत्तक : कामेश्वर
66. मुर्दा लोगों के बीच : सैली बलजीत
75. बद्धनवा नाऊ के लऊंडा सलमनवा : फ़रज़ाना महदी
82. सांप-बिच्छू : केसरा राम (पंजाबी कहानी) (अनुवाद : अमरीक सिंह दीप)

कविता
30-31. वर्षा, मनोज तिवारी

कथेतर
53. हम तेरे शहर आए मुसाफिर की तरह : पल्लव

आराम नगर
73. इरफान : अदाकारी की इब्तिदा और इंतिहा : जाहिद खान

घुसपैठिये
79. कोरोना डायरी : : जेबा खातून/अमन

लघुकथा
94. नीरज त्यागी

ग़ज़ल
42. सलीम ख़ां फ़रीद, अनिल 'मानव'

परख
90. रोमांच और रोमांस की तलाश में भटकती युवा पीढ़ी : साधना अग्रवाल
92. नाजिम हिकमत के देश में : अंकित नरवाल

शब्दवेधी/शब्दभेदी
95. कोरोना चिंता : तसलीमा नसरीन

पाऊं कहां हरि हाय तुम्हें

राकेश रंजन

न हन्यते

आलोचक नंदकिशोर नवल नहीं रहे! हिंदी आलोचना के लिए यह एक ऐसी क्षति है, जिसकी पूर्ति किसी विकल्प से संभव नहीं. उनके निधन से आधुनिक हिंदी साहित्य के पथ का एक ऐसा पथिक अनुपस्थित हो गया है, जिसने अपनी यात्रा में उसके सभी मोड़ों और मील के पत्थरों के वस्तु-सत्य तक पहुंचने की कोशिश की थी. हमने हिंदी आलोचना के एक सशक्त स्तंभ को ही नहीं खोया है, उच्च कोटि के एक साधक को भी खो दिया है, जिसकी साधना अपनी भाषा के साहित्य से गहरी ममता की परिणति थी. लोगों को पार उतारने वाला एक विस्तृत जलयान जलधार में विलीन हो गया! वह मशाल बुझ गई, जो आधुनिक हिंदी कविता की सबसे कठिन, जटिल और गुह्य सुरंगों में हमें रास्ता दिखाती थी!

पिछले पच्चीस वर्षों से मैं नवलजी के गहरे संपर्क में था. इस दौरान मेरी हर साहित्यिक गतिविधि के मुख्य प्रेरणा वही रहे–कभी प्रत्यक्ष, तो कभी अप्रत्यक्ष रूप से. 1995 में पहली बार उनसे मिला था. 'वागर्थ' पत्रिका में 'नई कलम' नाम से एक स्तंभ शुरू हुआ था, जिसमें मेरी कच्ची और आधी-अधूरी-सी आठ कविताएं प्रकाशित हुई थीं. उन्हें पढ़कर एक व्यक्ति ने मुझे पोस्टकार्ड के माध्यम से अपनी

नंदकिशोर नवल

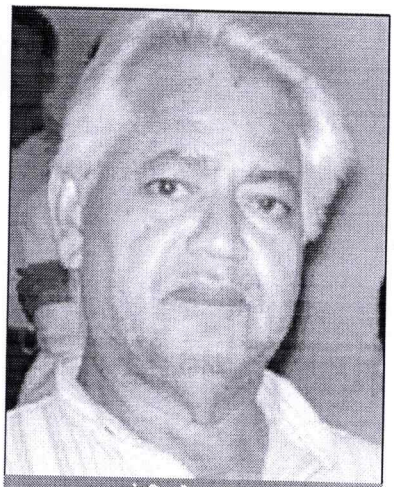

प्रतिक्रिया भेजी थी, जिसका नाम था–नंदकिशोर नवल. पत्र का मूल भाव यह था कि "साहित्य में जगह बनाने के लिए गुणवत्ता के साथ-साथ परिमाण की भी आवश्यकता होती है, इसलिए खूब पढ़िए और खूब लिखिए." मैं स्नातक प्रतिष्ठा (हिंदी) के अंतिम वर्ष की परीक्षा दे चुका था, मगर सच कहूं तो इस नाम से प्रायः अनभिज्ञ था. अपने शहर हाजीपुर में साहित्य से जुड़े जिन दो-तीन लोगों को मैं जानता था, उनमें पं. सिद्धिनाथ मिश्र प्रमुख थे. उन्होंने यह बताकर मुझे अचंभे में डाल दिया कि नवलजी उनके बाल-सखा हैं और हाजीपुर के ही हैं. मेरे घर से उनके गांव चांदपुरा की दूरी चार किलोमीटर से अधिक नहीं होगी. उन्होंने बताया कि नवलजी पटना विश्वविद्यालय में हिंदी के प्राध्यापक हैं और वहीं महेंद्रू नामक मुहल्ले में रहते हैं. वह शरद की दोपहर थी, जब मैं पहली बार सिद्धिनाथजी के साथ उनसे मिलने पहुंचा था. महेंद्रू के गुलबीघाट लेन की लखनचंद कोठी में वे किराए पर रहते थे. खिली-खुशनुमा धूप में उनके दरवाजे के दोनों तरफ लाल, नीले और सफेद रंग के फूल खिले थे. हमने दरवाजा खटखटाया, तो एक ऊंचे कद के आकर्षक और रूपवान व्यक्ति ने दरवाजा खोला, जो अपने धवल वस्त्रों में अत्यंत तेजोमय लग रहा था. वे नवलजी थे. सिद्धिनाथजी ने मेरा परिचय कराया, तो खुश हुए. मेरी पढ़ाई-लिखाई, घर-परिवार, परिवार के आय के स्रोत, साहित्य में रुचि के क्षेत्र आदि के विषय में पूछा, फिर कहा, "साहित्य बलिदान का रास्ता है. इस पर किसी भौतिक लाभ की अपेक्षा मत रखिएगा."

पांच-छह महीने बाद हाजीपुर की एक पत्रिका के लिए मैंने नवलजी पर एक लेख लिखा. सोचा, संपादक को देने से पहले उन्हें एक बार दिखा लूं. पटना जाकर उन्हें लेख पढ़ने को दिया. उसका पहला ही वाक्य पढ़कर बोले, "यह जो आपने लिखा है कि नामवर सिंह के बाद हिंदी आलोचना को मैंने आत्यंतिक रूप से प्रभावित किया है, यह सही नहीं है. नामवरजी के बाद किसी आलोचक ने हिंदी आलोचना को आत्यंतिक रूप से प्रभावित नहीं किया है." फिर समझाया, "आलोचना का काम किसी के बारे में बढ़ाकर या घटाकर लिखना नहीं है. उसका काम यह है कि जो जितना है, उसे उतना

ही बताए—न ज्यादा, न कम—और तर्क एवं युक्ति के साथ उसकी विशेषताओं को रेखांकित करे."

एक आलोचक के रूप में नवलजी की उपलब्धि रही कि उन्होंने हिंदी आलोचना के बुद्धि-बोझिल और ज्ञान-गरिष्ठ परिदृश्य में पाठकों के साथ सहज संवाद संभव किया. उनका साहित्यिक योगदान गुण की दृष्टि से विकासमान तथा परिमाण की दृष्टि से विपुल रहा. शोध, अनुसंधान और अध्यवसाय पर आधारित तथा गहरे दायित्व-बोध से प्रेरित उनकी लेखकीय प्रतिबद्धता आज के अगंभीर और अविश्वसनीय होते जाते साहित्यिक माहौल में एक उम्मीद की तरह थी. उन्होंने तीन दर्जन से अधिक आलोचना-पुस्तकें लिखीं, जिनमें 'कविता की मुक्ति', 'हिंदी आलोचना का विकास', 'प्रेमचंद का सौंदर्यशास्त्र', 'निराला और मुक्तिबोध : चार लंबी कविताएं', 'समकालीन काव्य-यात्रा', 'मुक्तिबोध : ज्ञान और संवेदना', 'मुक्तिबोध : कवि-छवि', 'निराला : कृति से साक्षात्कार', 'निराला-काव्य की छवियां', 'शताब्दी की कविता', 'कविता के आर-पार', 'कविता : पहचान का संकट', 'पुनर्मूल्यांकन', 'मैथिलीशरण', 'आधुनिक हिंदी कविता का इतिहास', 'हिंदी कविता : अभी, बिल्कुल अभी', 'दिनकर : अर्धनारीश्वर कवि', 'नागार्जुन का काव्य' और 'कवि अज्ञेय' काफी महत्त्वपूर्ण हैं. उन्होंने 'निराला रचनावली' तथा 'दिनकर रचनावली' सहित करीब दो दर्जन पुस्तकों का संपादन भी किया. 'ध्वजभंग', 'सिर्फ' और 'धरातल' के संपादन से शुरू हुई उनकी साहित्यिक पत्रकारिता की यात्रा 'कसौटी' जैसी महत्त्वपूर्ण पत्रिका तक पहुंची. 'आलोचना' पत्रिका के सह-संपादक रहे. चार सौ से अधिक कविताएं लिखीं, संस्मरण लिखे, अनुवाद किया. काव्यालोचन उनका मुख्य क्षेत्र था, पर उन्होंने गद्य-विधाओं के साथ-साथ साहित्य के सैद्धांतिक विषयों, सौंदर्यशास्त्रीय पक्षों और प्रासंगिक विमर्शों पर भी जमकर लिखा. डॉ. रामविलास शर्मा के बाद हिंदी आलोचना में इस तरह घुटना मोड़कर और आसन जमाकर काम करनेवाला दूसरा आलोचक नहीं हुआ. वे योजनाबद्ध ढंग से काम करते थे. किस दिन क्या लिखना है, कितना लिखना है, यह तय रहता था. जब तक उस दिन का काम पूरा नहीं कर लेते थे, चैन की सांस नहीं लेते थे. ऐसा कठोर आत्मानुशासन उन्हीं के बूते की बात थी. इस तरह करीब साढ़े छह दशकों की अपनी अथक लेखन-यात्रा में अंत-अंत तक उन्होंने अपने शरीर और दिमाग को पूरी तरह निचोड़ डाला था. वसंत हो या पतझर, वातास हो या बवंडर—सबने उनका द्वार खटखटाया, सबके लिए उठकर उन्होंने अपना द्वार खोला, पर इस दौरान कलम उनके हाथ से कभी नहीं छूटी.

हिंदी आलोचना-परंपरा के दाय को नतशिर होकर स्वीकार करते हुए भी; आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ. रामविलास शर्मा, प्रो. नलिनविलोचन शर्मा और डॉ. नामवर सिंह के प्रभाव और अपनी निर्मिति में इनकी भूमिका के प्रति कृतज्ञ भाव रखते हुए भी नवलजी इनसे जहां भी असहमत हुए, वहां अपनी राय बेहिचक जाहिर की. स्वयंप्राप्त निष्कर्षों के प्रति सदा निष्ठावान रहे. कभी ऐसा नहीं देखा गया कि वे समझ कुछ रहे हैं और कह कुछ और रहे हैं. उनकी जानकारी में कमी हो सकती थी, ईमानदारी में नहीं. अपने आलोचकीय दायित्व का सतत बोध, अपने अनुभव की निष्कवच अभिव्यक्ति की ईमानदारी, अपनी सीमा को स्वीकार करने का नैतिक साहस—ये ऐसे मूल्य हैं, जो आलोचक के रूप में नवलजी को विश्वसनीय बनाते हैं. आलोचना में जिन्हें वे अपना गुरु मानते रहे, उनकी भी असंगत स्थापनाओं और व्याख्याओं का उन्होंने तार्किक ढंग से खंडन किया और अपने शिष्यों को भी, जिनके साथ उनका व्यवहार सहज मित्रवत् होता था, हमेशा 'बाणभट्ट' के अघोरभैरव की तरह यही सिखाया कि "किसी से न डरना, गुरु से भी नहीं, मंत्र से भी नहीं, लोक से भी नहीं, वेद से भी नहीं." यही कारण है कि हिंदी आलोचना की प्रगतिशील परंपरा में उनका विकास ऐसे धरातल पर हुआ, जिसका चरित्र अधिक तार्किक, अधिक लोकतांत्रिक और निर्व्याज साहित्यिक है.

नवलजी की आलोचना-दृष्टि की विशेषता उसका हर प्रकार की वैचारिक संकीर्णता और पूर्वाग्रह-दुराग्रह से मुक्त होना है. 'आलोचना और मेरी आत्म-स्वीकृतियां' शीर्षक लेख में उन्होंने लिखा है, "निश्चय ही आलोचना को सबसे बड़ा नुकसान तब होता है, जब आलोचक एक खास विचारधारा में बंधकर रचना पर विचार करता है. यह बात केवल मार्क्सवादी विचारधारा के लिए ही नहीं, किसी भी विचारधारा के लिए सही है." उन्होंने स्वीकार किया है, "यह सच्चाई है कि मार्क्सवाद ने मेरी एक आंख को खोलकर दूसरी आंख को बंद कर दिया था, सो दूसरी तरफ का दृश्य मुझे अपनी भव्यता में दिखलाई नहीं पड़ता था." और यह भी कि "अनुभव ने मुझे यह सिखलाया कि कोई भी दृष्टि कविता को समझने में बाधक है." कितने लेखक सार्वजनिक रूप

से ऐसी आत्मस्वीकृतियां दर्ज करने का साहस कर पाते हैं, आलोचक तो ऐसा नहीं ही करते हैं. इस लेख में नवलजी ने बड़ी ईमानदारी से अपने वैचारिक बदलावों को सामने रखा. यह लेख उनकी आत्म-समीक्षा है.

इस बात का यह निष्कर्ष निकालना गलत होगा कि उनकी आलोचना हिंदी की मार्क्सवादी आलोचना के खिलाफ थी. वास्तविकता है कि वह केवल उसकी रूढ़ियों के खिलाफ संघर्ष करती रही और इस संघर्ष को शक्ति प्राप्त होती रही उनके भीतर निरंतर चलनेवाले आत्मसंघर्ष से. उन्होंने 'समकालीन काव्य-यात्रा' की भूमिका में लिखा, "जैसे रचनाकार को अपने को नकारने का अधिकार है, वैसे ही आलोचना के क्षेत्र में कार्य करने वाले को भी. कभी-कभी तो मुझे लगता है कि आलोचक यदि एक बिंदु पर रुक नहीं गया, तो आलोचना भूल-सुधार की निरंतर प्रक्रिया है. रचना में कोई शब्द अंतिम होता हो, पर आलोचना में वह नहीं होता. आलोचना विश्लेषण भी है और मूल्यांकन भी, पर अंततः वह अन्वेषण है, साहित्य के भीतर से जीवन की सच्चाइयों का."

किंतु मेरी ये सारी बातें कुंवरजी के शब्दों में, एक व्यक्ति के चले जाने के बाद का आयोजन है. "एक बीमार/बिस्तर से उठे बिना ही/घर से बाहर चला" गया है! शरदारंभ में आया प्रवासी खंजन वसंतांत में लौट गया! उसके दमकते पंखों और विकल प्राणों की स्मृतियां शेष रह गईं!

दिसंबर के बाद मैं नवलजी से नहीं मिल सका था. नौकरी के लिए रोज करीब सौ किलोमीटर की यात्रा कर लौटने के बाद कुछ करने और कहीं जाने की ताकत नहीं बचती थी. जनवरी में मोटरसाइकिल से गिरकर दुर्घटनाग्रस्त होने के कारण भी उनसे मिलने में बाधा आई. फिर फरवरी में एमए संकेंड सेमेस्टर की कक्षाएं शुरू हो गईं. इसी समय, फरवरी के अंत में, एक दोपहर उनका फोन आया. इधर दो-तीन वर्षों से, जबसे वे कम सुनने लगे थे, फोन पर बात नहीं करते थे. कोई जरूरी बात हुई, तो चाची (श्रीमती रागिनी शर्मा) के माध्यम से फोन पर संवादों का आदान-प्रदान होता था. मगर उस दोपहर उन्होंने खुद फोन लगाया था. मेरे फोन उठाते ही कहा, "राकेशजी, आपने मुझे त्याग दिया है?" कितनी अपेक्षा, ममता और विकलता थी इस फटकार में! ऐसा निरिच्छ निर्देशक अब मुझे कहां मिलेगा! मैंने शर्मिंदगी के साथ जवाब में कुछ कहने की कोशिश की. कहा कि आऊंगा. पर वे सुन कहां पाए होंगे! मैं कह कुछ रहा था, वे सुन कुछ रहे थे, इसलिए फोन रखना पड़ा. इसके बाद हर पल सोचता रहा कि जल्द ही मिलने जाऊंगा. पर मेरा दुर्भाग्य! कोरोना की वजह से लॉकडाउन हो गया और फिर वह हुआ, जिसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी. तबसे उनका वह वाक्य मेरे कलेजे में नश्तर की तरह चुभा हुआ है, "राकेशजी, आपने मुझे त्याग दिया है?" इच्छा होती है, कलेजे में जोर-जोर से मुक्का मारूं और फूट-फूटकर रोऊं, "पाऊं कहां हरि हाय तुम्हैं, धरती में धंसौं कि अकासहिं चीरौं."

❐

संपर्क : सहायक प्राध्यापक,
हिंदी विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार).
मो. 8002577406

सूचना

ईमेल द्वारा हंस को प्रतिदिन काफी संख्या में रचनाएं मिल रही हैं. कोरोना संकट के कारण कार्यालय बंद है इसलिए रचना-निर्णय में थोड़ा समय लग रहा है. प्राप्त रचनाओं में कविता और गजल की संख्या अधिक है. ऐसी स्थिति में कुछ माह तक हम कविता व गजल लेने की स्थिति में नहीं हैं.

आपसे आग्रह है कि अभी आप सिर्फ कहानी/लेख ही भेंजे. रचना पर निर्णय हो जाने पर ही आप दूसरी रचना भेंजे. **–संपादक**

आग्रह

- **हंस** के जिन सदस्यों का वार्षिक शुल्क खत्म हो गया है या होने जा रहा है वे कृपया अपना शुल्क शीघ्र भिजवाएं. चैक अक्षर प्रकाशन प्रा.लि. (Akshar Prakashan Pvt.Ltd.) के नाम से हो. पत्र/राशि भेजते समय अपनी सदस्यता संख्या लिखें या नई/पुरानी सदस्यता एवं ईमेल का उल्लेख अवश्य करें ताकि किसी भी प्रकार के दोहराव से बचा जा सके.
- सदस्यता राशि बैंक में जमा करते समय कार्यालय को अवश्य सूचित करें.
- डाक से हंस को भेजी जाने वाली प्रत्येक रचना में अपना नाम/पता/दूरभाष/ईमेल स्पष्ट अक्षरों में लिखें. लिफाफे के बाहर रचना-विधा का उल्लेख करें. रचना के साथ डाक टिकट लगा लिफाफा अवश्य संलग्न करें एवं रचना की एक प्रति अपने पास सुरक्षित रखें. छोटी रचना के लिए पत्र-व्यवहार करना संभव नहीं है.
- रेतघड़ी/रपट/अपना मोर्चा (पत्र) की शब्द संख्या अधिक न हो ताकि अधिक से अधिक लोगों को उचित स्थान दिया जा सके. रेतघड़ी की रपट के लिए शब्द-सीमा 500 की हो तो हमें सुविधा होगी. **–बीना उनियाल**